भगत कबीर – सबद २८

बिखिआ बिआपिआ सगल संसारु ॥

रागु गउड़ी, भगत कबीर, गुरु ग्रंथ साहिब, ३२८

बिखिआ बिआपिआ सगल संसारु ॥
बिखिआ लै डूबी परवारु ॥१॥
रे नर नाव चउड़ि कत बोड़ी ॥
हरि सिउ तोड़ि बिखिआ संगि जोड़ी ॥१॥ रहाउ ॥
सुरि नर दाधे लागी आगि ॥
निकटि नीरु पसु पीवसि न झागि ॥२॥
चेतत चेतत निकसिओ नीरु ॥
सो जलु निरमलु कथत कबीरु ॥३॥२४॥

सार: बिखिया को उस आंतरिक ज़हर या नकारात्मकता के तौर पर समझा जा सकता है जो भ्रम से जुड़े लगाव के कारण होता है और हमारे विचार, निर्णय और जीवन जीने के तरीक़े को बिगाड़ते हैं। यह तब उत्पन्न होता है जब असुरक्षा, भ्रम और द्वैत हमें घेर लेते हैं। हालांकि, मन स्वाभाविक रूप से संतुलन और शांति चाहता है लेकिन यह लगाव हमारा ध्यान भटकाते हैं और हमारी अंतरात्मा को कमज़ोर करते हैं। समय के साथ, यह आत्म-विनाशकारी प्रवृत्तियों का रूप ले लेती हैं और हमें उन चीज़ों के पीछे दौड़ाती हैं जो अंततः हमें बेचैन या असंतुष्ट ही छोड़ती हैं। जैसे-जैसे यह निर्भरता कम होती है, वैसे-वैसे चिंतन की हमारी क्षमता गहरी होती जाती है और मन धीरे-धीरे अपनी स्वाभाविक निर्मलता, स्पष्टता, स्थिरता और आंतरिक सामंजस्य को पुनः प्राप्त कर लेता है।

बिखिआ बिआपिआ सगल संसारु ॥
पूरा संसार बिखिया अर्थात् ज़हर से घिरा हुआ है। यहाँ विष उन नकारात्मक लगाव और भ्रमों का रूपक है जो हमारी अंतरात्मा के लिए ज़हरीले हैं।

बिखिआ लै डूबी परवारु ॥१॥

इस विष से प्रभावित होकर पूरा परिवार डूब गया है। यह हमारे समाज के लिए एक उदाहरण है जो भ्रम और दोहरेपन की नकारात्मकता में फँसा हुआ है। (१)

रे नर नाव चउड़ि कत बोड़ी ॥

हे मानव, तेरी नाव मज़बूत है, तू इसे क्यों डुबो रहा है? यह आत्म- हानि की ओर इशारा करता है, मनुष्य का शरीर संतुलन बनाए रखने के लिए बना है लेकिन मोह-माया के बंधन शांति का अंत कर देते हैं।

हरि सिउ तोड़ि बिखिआ संगि जोड़ी ॥१॥ रहाउ ॥

सर्वव्यापी ईश्वर से अपना नाता तोड़कर, मन स्वयं को मोह-माया के ज़हर से जोड़ लेता है। यह दर्शाता है कि मनुष्य का दुःख तब शुरू होता है जब हम अपनी आंतरिक सच्चाई से नाता तोड़ लेते हैं। (१)(विराम)

सुरि नर दाधे लागी आगि ॥

आग महान लोगों और आम लोगों, दोनों को ही जलाती है। इससे पता चलता है कि इच्छा और अहंकार किसी में फ़र्क नहीं करते, वह किसी भी ऐसे व्यक्ति को नष्ट कर सकते हैं जिसमें विनम्रता और समभाव की कमी हो।

निकटि नीरु पसु पीवसि न झागि ॥२॥

पानी पास ही है, फिर भी अज्ञानी जीव उसका झाग तक पीने की कोशिश नहीं करता। इससे पता चलता है कि अजागृत मन अकसर आध्यात्मिक पोषण की उपलब्धता को नज़रअंदाज़ कर देता है जिससे अज्ञान और दुख का चक्र चलता रहता है। (२)

चेतत चेतत निकसिओ नीरु ॥

लगातार चिंतन और मनन करने से, भीतर का जल प्रकट होने लगता है। इससे संकेत मिलता है कि बार-बार भीतर की ओर ध्यान देने से सोई हुई शांति को उजागर किया जा सकता है जिससे वह जीवंत और सुलभ हो जाती है।

सो जलु निरमलु कथत कबीरु ॥३॥२४॥

कबीर कहते हैं कि यह आंतरिक जल निर्मल है। यह नकारात्मकता और विषैले विचारों के इलाज के रूप में आत्म-चिंतन, सजगता और मनन का सुझाव देता है जिससे मन अपनी स्वाभाविक और पवित्र अवस्था में लौट आता है। (३)(२४)

तत्त्व: भगत कबीर ऐसी आंतरिक धारा का वर्णन करते हैं जो हमारे अस्तित्व में ताज़गी लाती है और जाग्रत चेतना की प्रतीक है। जैसे-जैसे यह धारा बहती है, कठोर इच्छाएँ ढीली पड़ जाती हैं और मन हलका महसूस करता है, निरंतर बनी रहने वाली लालसाओं से मुक्त हो जाता है। एक सौम्य स्पष्टता हृदय को शांत करती है जो आंतरिक सामंजस्य से मिलने वाले नव-जीवन को दर्शाती है। हम एक शांत उपस्थिति का अनुभव करते हैं जो हमें पुनर्जीवित करती है और हमें ग्रहणशीलता के लिए खोलती है। इस सूक्ष्म शुद्धि में, हमारी जागरूकता अपनी स्वाभाविक सरलता और जीवन-आधारित स्रोत की निकटता में लौट आती है।

सबद व्याख्या **विनइंदर कौर** और **अमरदीप सिंह**

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com